P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-7* (Part-2) March- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

वैदिक समाज में स्त्री और उनकी दशा

दिनेश सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर,
इतिहास विभाग,
राजकीय महाविद्यालय,
गंगेश्वरी, अमरोहा, भारत

सारांश

भारतीय इतिहास में वैदिक कालीन स्त्रियों की दशा के बारे में विचार करें तो पता चलता है कि वैदिक कालीन स्त्रियां एक बेहतर स्थिति में थीं। वैदिक समाज में कन्या को पुत्र के समान प्रेम किया जाता था। पुत्र के समान ही कन्या का भी उपनयन संस्कार किया जाता था। स्त्री अपनी इच्छानुसार किसी भी पुरूष से विवाह कर सकती थी। विवाह संस्कार के समय आधुनिक समय की तरह सात फेरे लेने की भी परंपरा इस काल में थी। पत्नी के रूप में स्त्री की दशा उच्च थी तथा माता के रूप में स्त्री पूजनीय थी। आर्थिक रूप से वैदिक समाज की स्त्री सुदृढ़ थी उसको अनेक आर्थिक अधिकार प्राप्त थे।

वर्तमान समय में स्त्रियों के साथ जिस प्रकार का दुर्व्यवहार किया जाता है वह बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण है और वैसा वातावरण वैदिक समाज में कहीं भी दृष्टिगोचर नहीं होता है। वैज्ञानिकता के इस उच्चतम दौर में स्त्रियां आज भी सरकारों के दोगुलेपन की नीति का शिकार हैं क्योंकि जो विशेषाधिकार और और सम्पन्नता स्त्री की होनी चाहिए थी वह आज भी कहीं दिखाई नहीं दिखाई देती है। आवश्यकता है अपने प्राचीन ऐतिहासिक उदाहरणों से सीख लेने की जिससे कि स्त्री को उसका सही स्थान सच्चे मायने में प्राप्त हो सके, जैसा कि वैदिक कालीन समाज में होता था। वैदिक समाज में स्त्रियों के प्रति कहीं भी संकीर्ण मानसिकता का परिचय नहीं मिलता है क्योंकि किसी भी प्रकार की कुरीति का वर्णन व्यापक रूप में इस काल में नहीं मिलता है। वैदिक समाज की स्त्री लगभग सभी अधिकारों से परिपूर्ण थी। भारतीय इतिहास में स्त्रियों की दशा के सापेक्ष वैदिक समाज को एक उत्तम काल कहा जा सकता है।

मुख्य शब्द : वैदिक समाज और स्त्री की तात्कालिक सामाजिक स्थिति, वर्तमान परिस्थितियों की तुलना में स्त्रियों के अधिकारों का समीक्षात्मक अध्ययन।

प्रस्तावना

वैदिक कालीन समाज पर दृष्टिपात करें तो पता चलता है कि स्त्रियों की सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक दशा पुरूषों के सापेक्ष एक बेहतर स्थिति में थी। स्त्री व पुरूष इस काल में धार्मिक एवं सामाजिक सभी कार्यों एवं कर्तव्यों में समान रूप से भाग लेते थे। स्त्री पूर्णरूप से स्वतंत्र थी तथा वह अपनी स्वतंत्रता का उपयोग भी बेहतर तरीके से करती थी। प्रस्तुत शोधपत्र वैदिक समाज में स्त्री और उनकी दशा में यही बताने का प्रयास किया गया है। वैदिक कालीन समाज में लोग इस तथ्य से भली भांति परिचित थे कि स्त्रियों के प्रति सम्मान तथा उसकी सामाजिक स्वतंत्रता से ही सभ्यता का विकास संभव है इसलिए वैदिक कालीन समाज के लोगों ने स्त्रियों को सामाजिक तथा धार्मिक क्षेत्रों में पुरूषों के समान अधिकार दिए।

अध्ययन का उद्देश्य

आज वर्तमान समय में स्त्रियों के प्रति जो माहौल है वह हमारे समाज के लिए एक अच्छा लक्षण नहीं है क्योंकि स्त्रियों के साथ लूट, बलात्कार, छेड़छाड़, धोखाधड़ी जैसी आपराधिक घटनाएं आम बात हो गई हैं। यदि आधुनिक दौर में जबकि हमारे पास बहुतायात में सुख सुविधाएं व बेहतर अत्याधुनिक तकनीकि उपलब्ध हैं फिर भी स्त्रियों के साथ इस प्रकार की आपराधिक गतिविधियां बेहद ही शर्मनाक हैं। इस प्रकार की घटनाओं को रोकने एवं स्त्रियों की स्थिति में सुधार हेतु अपने इतिहास से सबक लेना जरूरी है क्योंकि प्राचीन भारत में भी स्त्री की स्थिति में सुधार हेतु विभिन्न ऐतिहासिक तथ्य भरे पड़े हैं।

प्रस्तुत शोधपत्र वैदिक समाज में स्त्री और उनकी दशा में वैदिक समाज की स्त्रियों की स्थिति एवं अधिकारों के बारे में विश्लेषण करने का प्रयास किया गया जिससे कि वर्तमान समाज व पीढ़ी इससे लाभान्वित हो सके और हमारे समाज की स्त्रियों के लिए आदर्श परिस्थितियां स्थापित हो सके।

साहित्यावलोकन

प्रस्तुत शोध पत्र में प्राथमिक स्रोतों के अनुवादित संस्करणों का अध्ययन किया गया है जिसमें ऋग्वेद, अथर्ववेद, शतपथ ब्राहाण, ऐतरेय ब्राहाण इत्यादि प्रमुख रूप से हैं। इसके अतिरिक्त कुछ द्वितीयक स्रोतों ए0 एस0 अल्तेकर के ग्रन्थ दि पोजीशन ऑफ वुमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, डॉ0 उर्मिला प्रकाश की पुस्तक प्राचीन भारत में नारी का सन्दर्भ भी प्रमुख रूप से लिया गया है। ऋग्वेद में वर्णन मिलता है कि वैदिक काल में घर को स्वर्ग जैसी आभा प्रदान करने वाली स्त्री जब वधू बनकर अपने पति के घर में प्रवेश करती थी तो घर के सभी सदस्य उसको आशीर्वाद और मंगलकामनायें देते थे। ऋग्वेद में यह जिक्र भी किया गया है कि घर की बहु मधुरभाषिणी हो अर्थात बहू से यही अपेक्षा की जाती थी कि वह परिवार के सभी सदस्यों से प्रेमपूर्वक व्यवहार करे और वह शिव संकल्पयुक्त हो।

शतपथ ब्राहाण में भारतीय स्त्री के बारे में अत्यन्त ही सुन्दर चित्रण मिलता है। इसके अन्तर्गत स्त्री के विशेषाधिकारों के बारे में वर्णन मिलता है। शतपथ ब्राहाण में कहा गया है कि वैदिक समाज में स्त्रियों को पुरूषों के समान अधिकार प्राप्त थे। पति के समस्त कार्य पत्नी के सहयोग से पूर्ण किये जाते थे विशेषरूप से यज्ञादि अनुष्ठान को पत्नी के बिना अपूर्ण माना जाता था। स्त्रियां वैदिक शिक्षा ग्रहण कर न केवल मंत्रोच्चारण करती थीं बल्कि अविवाहित स्त्रियां तो वैदिक काल के यज्ञ भी अकेले ही सम्पन्न करती थीं। अथर्ववेद में भी स्त्रियों की महत्ता के बारे में वर्णन मिलता है। अथर्ववेद में कहा गया है कि विवाह के चौथे दिन ही गर्भाधान संस्कार के माध्यम से वीर्यवान पुत्र की प्राप्ति के लिए मंत्र पढ़े जाते थे तथा पुत्र प्राप्ति हेतु पुंसवन संस्कार किया जाता था, इसके अतिरिक्त यह भी वर्णन मिलता है कि वैदिक कालीन समाज में स्त्री और उसके मातृत्व की अत्यन्त महत्ता थी।

ऐतरेय ब्राहाण भी भारतीय नारी एवं उसकी तात्कालिक स्थिति के बारे में जानने का एक मुख्य स्रोत है। इस स्रोत में वर्णन मिलता है कि वैदिक कालीन समाज में स्त्री एक प्रतिष्ठा की पात्र थीं और पत्नी के रूप मे निश्चय ही पति की अर्द्धांगिनी का दर्जा प्राप्त था। डॉ0 उर्मिला प्रकाश अपने ग्रन्थ प्राचीन भारत में नारी में भी कहते हैं कि वैदिक समाज में माता पिता कन्या को शिक्षा के योग्य समझते थे तथा वैदिक काल से लेकर ईसवी शताब्दी के प्रारम्भ तक कन्या का वेदाध्ययन उपनयन संस्कार से प्रारम्भ होता था। इसके अतिरिक्त ए0 एस0 अल्तेकर अपने ग्रन्थ दि पोजीशन ऑफ वुमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन में कहते हैं कि सर्वोच्च अधिकार स्पस्ट रूप से पति में निहित था परन्तु पत्नी की वास्तविक स्थिति सुखद थी। वैदिक कालीन समाज में हम पाते हैं कि पत्नी के साथ अत्यन्त शिष्टाचार का व्यवहार किया जाता था। गृह प्रबंधन स्त्री के प्रत्यक्ष प्रभार में था और उसकी वैचारिक स्थिति भी प्रबल थी।

प्रस्तुत शोध विषय वैदिक समाज में स्त्री और उनकी दशा में प्रयुक्त स्रोतों के माध्यम से उन बातों को ग्रहण करने का प्रयास किया गया है जिनसे कि आधुनिक पीढ़ी अपने भविष्य हेतु स्त्री की महत्ता और उसके अधिकरों के बारे में सजग रह सके।

सम्पूर्ण सृष्टि के निर्माण में स्त्री का ही योगदान है व प्रत्येक युग की संस्कृति का मुख्य मापदण्ड स्त्री के बिना अधूरा है। इसलिए स्त्री प्रत्येक कालखंड के समाज के लिए एक विशेष स्थान रखती है परन्तु ईश्वर द्वारा बनाये गये स्त्री जैसे अनमोल रत्न की दशा प्रत्येक युग में एक सी नहीं रही है। भारतीय इतिहास के विभिन्न कालखण्डों में अनेकों व्यवस्थाकारों ने स्त्री की परिवर्तनशील स्थिति पर चिन्तन किया है यहां प्राचीन गृहस्थाश्रम को आदर्श रूप प्राप्त होता था तथा वैदिक काल में गृह का अस्तित्व नारी के अस्तित्व में ही निहित माना जाता था।[1]

वैदिक समाज में कन्या को पुत्र के समान ही स्नेह व आदर सम्मान दिया जाता था परन्तु कन्या के जन्म के समय पुत्रोत्पति के समान संस्कारों का सम्पादन नहीं किया जाता था।[2] वैदिक काल में कन्या की शिक्षा का प्रारम्भ उपनयन संस्कार से होता था क्योंकि इस काल में लोपामुद्रा, विश्वतारा, सिक्ता तथा घोषा आदि अनेक विदुषी स्त्रियों के उदाहरण भरे पड़े हैं जिन्होंने वैदिक मंत्रों की रचना भी की थी । यह भी एक धारणा थी कि एक स्त्री अपने विवाह में तभी सफल हो सकती है यदि उसे उसके विधाध्ययन काल में पूर्ण रूप से प्रशिक्षण दिया गया हो।[3] कन्याओं के लिए वेदों का अध्ययन इसलिए आवश्यक था क्योंकि स्त्रियों को प्रतिदिन नियमित रूप से प्रातः व सांध्यकालीन प्रार्थना करनी पड़ती थी तथा पत्नियां यज्ञ के समय अपने पति के साथ मंत्रो का उच्चारण करती थी।[4] वैदिक समाज में स्त्री को एक देवी के समान समझा जाता था तथा देवी के समान ही एक स्त्री को पूज्य माना जाता था। नारी मनुष्य की जननी एवं धात्री होने के कारण श्रृद्धा की पात्र समझी जाती थी। मातृत्व को नारी के लिए वरदान माना जाता था एवं बांझपन नारी के लिए एक घोर अभिशाप समझा जाता था।[5] पुत्रहीन स्त्री को शुभ कर्मों एवं धार्मिक संस्कारों से वंचित माना जाता था।[6] वीरपुत्रों को जन्म देने वाली स्त्री को समाज में विशेष स्थान प्राप्त था। वैदिक समाज में स्त्री द्वारा वीर पुत्रों की उत्पत्ति हेतु कामना करते हुए उदाहरण मिलते हैं। पुत्र उपलब्धि के लिए पुंसवन संस्कार सम्पन्न किया जाता था। इससे यह स्पस्ट होता है कि वैदिक समाज में मातृत्व की महत्ता का एक विशेष स्थान था और साथ ही यह भी सिद्ध होता है कि मातृत्व की भोक्ता स्त्री का समाज में अधिक सम्मान होता था।

वैदिक समाज में स्त्री का माता के रूप में जो सम्मान होता था वैसा सम्मान कहीं भी देखने को नहीं मिलता है। माता को उत्पत्ति की देवी माना जाता था क्योंकि वही सन्तान को जन्म देती थी। वैदिक समाज में पर्दा प्रथा का चलन नहीं था।[7] स्त्री एवं पुरूष दोनो शिक्षा ग्रहण करने का कार्य साथ–साथ करते थे। स्त्रियों पर खुली आम सभाओं में भाग लेने पर किसी प्रकार का कोई प्रतिबन्ध नहीं था। इस कालखंड में स्त्री समाज एवं परिवार में प्रतिष्ठा की पात्र थी क्योंकि पति की पूर्णता भी पत्नी के अस्तित्व में निहित मानी जाती थी।[8] पत्नी के रूप में स्त्री निश्चय ही पति की अर्द्धांगिनी होती थी तथा

इस युग में पत्नी को पति के मित्र का रूप प्राप्त था।[9] वैदिक कालीन स्त्री अपने पति के सहयोग से धार्मिक प्रार्थना, पूजा और यज्ञ जैसे कृत्य सम्पन्न करती थी। वैदिक कालीन स्त्री धार्मिक क्षेत्र में पुरूष के समान समस्त अधिकारों का उपभोग करती थी। एक स्त्री धर्म के मार्ग में बाधक नहीं थी। धार्मिक संस्कारों एवं कार्यक्रमों में पत्नी की उपस्थिति एवं उसका सहयोग वांछनीय माना जाता था।[10]

वैदिक समाज के रचनाकारों ने परिवार की वधू को सामाज्ञी का दर्जा दिया था। वधू परिवार के समस्त सदस्यों की एक सामाज्ञी बनकर रहती थी। वैदिक कालीन स्त्री अपनी क्षमता से परिवार के विघटनकारी तत्वों को एक सूत्र में पिरोकर स्नेह के बन्धन में बांध देती थी। इस प्रकार वैदिक कालीन समाज में वधू के रूप में उसको एक आदरणीय एवं उच्च स्थान प्राप्त था। वैदिक कालीन समाज में वधू अथवा पत्नी को यज्ञ करने का भी अधिकार प्राप्त था, पति की अनुपस्थिति में पत्नी को यज्ञ स्वयं सम्पन्न करना पड़ता था। वैदिक समाज में स्त्रियां वैदिक वाड्ग्मय का अध्ययन करती थी एवं विभिन्न यज्ञों में भाग लेकर मंत्रों का उच्चारण भी करती थीं। स्त्रियों को पुरूषों के समान ही अधिकार प्राप्त थे और धार्मिक आधार पर भी वह स्वतंत्र थी। वैदिक समाज में स्त्रियों के साथ किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाता था।

वैदिक समाज में स्त्रियों की आर्थिक दशा काफी सुदृढ़ थी। इस काल में पति एवं पत्नी दोनों का हर सम्पत्ति पर संयुक्ताधिकार होता था तथा विवाह के समय पति से यह प्रतिज्ञा कराई जाती थी कि कभी भी अपनी पत्नी के आर्थिक हितों का अतिक्रमण नहीं करेगा। यह व्यवस्था पत्नी को सुदृढ़ बनाती थी क्योंकि अयोग्य एवं अनुत्तरदायी पति के विरूद्ध यह विशेषाधिकार एवं अस्त्र का कार्य करता था।[11] वैदिक समाज में स्त्री धन कन्या के उत्तराधिकार के प्रश्न पर पुत्रियों को प्राथमिकता दी जाती थी। इस कालखंड की स्त्री कुछ व्यक्तिगत सम्पत्ति की भी स्वामिनी होती थी जिसे स्त्री धन कहा जाता था। पत्नी की यह सम्पत्ति उसके वस्त्र, आभूषण एवं धनराशि के रूप मे होती थी । पत्नी स्त्री के रूप में यह सम्पत्ति शादी के समय या अन्य अवसरों पर उपहारों के रूप में स्वीकार करती थी। इस स्त्रीधन अथवा सम्पत्ति पर पत्नी का पूर्ण अधिकार होता था।[12] पत्नी द्वारा यह सम्पत्ति पूर्ण रूप से हस्तांतरणीय थी। वैदिक कालीन समाज में पुत्री किसी भी प्रकार से पुत्र से कमतर नहीं थी। पुत्र के अभाव में एक पिता अपनी सम्पत्ति किसी अजनबी को देने की अपेक्षा अपनी पुत्री को ही देता था। इसी कारण वैदिक समाज में पुत्र को गोद लेने की प्रथा का बहुत कम प्रचलन था।[13]

वैदिक समाज में स्त्रियां जो विधवा हो जाती थीं वे यातनामय जीवन नहीं जीती थीं वरन् वे उन समस्त सुविधाओं का उपयोग करती थीं जैसा एक सामान्य स्त्री करती थी। ऋग्वेद में हमें विधवा विवाह निषेध होने का वर्णन नहीं मिलता। ऋग्वेद की एक ऋचा में उस स्त्री से जो अपने पति के शव के साथ लेटी हुई है, कहा गया है कि–स्त्री उठो! तुम उसके पास लेटी हो जिसकी इहलीला समाप्त हो चुकी है। अपने पति से दूर हटकर जीवितों के संसार में जाओ और उसकी पत्नी बनो जो तुम्हारा हाथ पकड़ता है और जो तुमसे विवाह करने को इच्छुक है।[14] वैदिक समाज में विधवाओं को सम्पत्ति का अधिकार प्राप्त नहीं था, विशेष रूप से एक पुत्रहीन विधवा को पति की सम्पत्ति में हिस्सा नहीं मिलता था।[15] इस युग में विधवा पुनर्विवाह प्रचलित था अतः जो विधवाएं शादी कर लेती थीं उन्हें सम्पत्ति में हिस्सा नहीं मिलता था दूसरी ओर जो स्त्रियां नियोग प्रथा का हिस्सा बनती थीं उनको भी सम्पत्ति के अधिकार का विशेष अधिकार नहीं था क्योंकि नियोग प्रथा के माध्यम से वह पुत्र प्राप्ति कर अपना हिस्सा प्राप्त कर लेती थी। इसलिए वैदिक समाज में विधवाओं की संख्या कम दृष्टिगत होती है। वैदिक काल में लौकिक व पारलौकिक शांति के लिए पुत्रों की कामना की जाती थी तथा यज्ञादि अवसरों पर पत्नी के साथ पति की उपस्थिति आवश्यक थी अतः इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए विवाह का होना आवश्यक था। विवाह व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन का प्रमुख अंग था, वर की ओर से बारात विवाह करने के लिए वधू के घर जाती थी और वहां पर सामूहिक भोज के पश्चात् यज्ञादि के साथ विवाह सम्पन्न होता था। ततपश्चात् स्त्री और पुरूष दाम्पत्य जीवन में प्रवेश करते थे, इसको गृहस्थाश्रम में प्रविष्ट होने का एक अनुष्ठान भी माना जाता था। विवाह पश्चात् पति और पत्नी दोनों आपसी समझबूझ से अपने दाम्पत्य जीवन को चलाते थे। पत्नी पति की आज्ञा का पालन करती थी और पति भी विभिन्न अवसरों पर पत्नी की सलाह लेते थे।

वैदिक समाज में विवाह संस्कार एक महत्वपूर्ण एवं आवश्यक कार्य था क्योंकि कन्या के लिए विवाह आर्थिक, सामाजिक एवं धार्मिक दृष्टि से अति आवश्यक था। वेदों के अनुसार अविवाहित कन्या अपवित्र होती थी।[16] इसलिए इस समाज में विवाह के विभिन्न स्वरूप दृष्टिगोचर होते हैं जिनमें स्वयंवर प्रथा, प्रेम विवाह आदि प्रमुख थे। वैदिक समाज में स्वयंवर प्रथा में वधू द्वारा वर के चयन करने हेतु वधू का पिता एक सभा में अनेक विवाह योग्य पुरूषों को आमंत्रित करता था ताकि कन्या स्वयंवर स्थल पर अपनी पसंद के वर का चयन कर सके। यह स्वयंवर प्रथा राजघरानों तक सीमित रही।[17] इस कालखंड में कन्या एवं युवक एक दूसरे को स्वयं पसन्द करके जब विवाह सूत्र में बंधते थे तो इसे प्रेम विवाह कहा जाता था। यदि कन्या एवं युवक के मध्य प्रेम सम्बन्ध न हो तो भी माता पिता की स्वीकृति से कन्या एवं युवक को विवाह से पूर्व एक दूसरे को समझने की पूर्ण स्वतत्रंता प्राप्त थी।[18] बालविवाह प्रथा वैदिक काल में प्रचलित नहीं थी क्योंकि इस काल में प्रेम विवाह को पूर्ण स्वीकृति थी। इसके अतिरिक्त कन्याएं शिक्षा ग्रहण करती थीं तब उनका विवाह होता था अतः उनकी उम्र अवश्य ही अधिक हो जाती होगी । वैदिक कालीन समाज में खुले तौर पर दहेज प्रथा का चलन पर नहीं मिलता है परन्तु एक पिता अपनी कन्या के विवाह के अवसर पर अनेक प्रकार की भेंट प्रेमपूर्वक देता था।[19]

वैदिक कालीन समाज में बहु विवाह का वर्णन भी मिलता है। इस प्रथा का चलन संभवतः समाज के उच्च वर्ग एवं पुरोहितो के मध्य ही प्रचलित था।[20] इस

काल में पत्नी को अपने पति रखने का अधिकार नहीं था।[21] सती प्रथा का चलन नहीं था परन्तु एक परम्परा के अनुसार पत्नी अपने मृत पति के साथ चिता पर लेटती थी[22] और समाज के सम्मानित जनों के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर विधवा स्त्री चिता से उठकर पुनः समाज में आती थी और पुनर्विवाह या नियोग द्वारा पुत्र प्राप्त करती थी।[23] हमें वैदिक काल में तलाक व पर्दा प्रथा के उदाहरण भी कम मिलते हैं क्योंकि स्त्रियों के जन सामान्य के बीच जाने पर किसी भी प्रकार का कोई प्रतिबंध नहीं था।

इस प्रकार वैदिक समाज में स्त्रियों का स्थान एक अच्छे स्तर का एवं आदरणीय कहा जा सकता है क्योंकि समाज के लगभग हर क्षेत्र में स्त्रियों का पर्याप्त सहयोग रहता था। शिक्षा के द्वार स्त्रियों के लिए खुले थे। ऋग्वेद में कई स्थानों पर पुत्र एवं पुत्रियों की दीर्घायु के लिए कामना किये जाने का वर्णन मिलता है। अतः कहा जा सकता है कि इस कालखंड की स्त्री की स्थिति अन्य कालखंडों की तुलना में उच्च एवं सम्मानजनक थी।

वर्तमान समय में हमारा देश व समाज हर क्षेत्र में दिन प्रतिदिन तरक्की के पायदान को चढ़ रहा है परन्तु स्त्री के प्रति जो सम्मान आज होना चाहिए वह आज तक स्त्री को नहीं मिला है। इक्कीसवीं सदी के इस भारत में भारतीय नारी का अस्तित्व आज भी अपने आप को बचाने के लिए लड़ रहा है क्योंकि आज भी हमारे पुरूष प्रधान देश में स्त्री के पास जो अधिकार होने चाहिए उन अधिकारों एवं विशेषाधिकारों से आज की नारी मरहूम है। अतः यहां यह कहना न्यायोचित होगा कि हमें प्राचीन इतिहास से सबक लेना चाहिए कि किस प्रकार वैदिक समाज में भारतीय नारी असीमीत एवं विशेषाधिकारों से परिपूर्ण थी और आधुनिक दौर से श्रेष्ठ स्थिति में थी। यदि अब भी इस पर गंभीरतापूर्वक विचार नहीं किया गया तो देश की आने वाली पीढ़ी भी सुरक्षित नहीं रहेगी। अन्त में श्री धर्मेन्द्र कुमार निवातियां की नारी को समर्पित कुछ पंक्तियां क्योंकि यह सम्पूर्ण प्रकृति नारी के बिना अधूरी है. ..

नहीं अब अर्थहीन अबला नहीं
एक शशक्त सम्पूर्ण सर्वस्व
वो पुष्प जिसकी खुशबू से
महकता है पूर्ण घर संसार
इसलिए संबोधन उचित है
अबला नहीं वो अब सबला नारी!!
है सबला नारी..! सबला नारी...!!

अंत टिप्पणी

1. *ऋग्वेद, 3.53.4 गृहणी गृमुच्यते।*
2. *अथर्ववेद, 6.11।*
3. *अल्तेकर, ए0एस0 : दि पोजीशन ऑफ वूमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, मोतीलाल बनारसी दास पब्लिशर्स प्रा0 लि0 दिल्ली–2005, पृ0 10*
4. *मिश्र, डॉ0 उर्मिला प्रकाश : प्राचीन भारत में नारी , मध्य प्रदेश हिन्द ग्रन्थ अकादमी, भोपाल–2002 पृ0 03*
5. *ऋग्वेद, 1.16.5।*
6. *शतपथ ब्राहाण, 5.3.1.13।*
7. *ऋग्वेद, 1.167.3।*
8. *शतपथ ब्राहाण, 5.21.10, ऐतरेय ब्राहाण,1.2.5।*
9. *ऐतरेय ब्राहाण, 7.3.13.सखा ह जाया।*
10. *अल्तेकर, ए0एस0: दि पोजीशन ऑफ वूमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन , ऑप. सिट. पृ0 196*
11. *वही, पृ0 214*
12. *तैत्तिरीय ब्राहाण, 6.2.1.10।*
13. *ऋग्वेद,7.4.8 नहि प्रभायारणः सशेवो न्योदर्यो भन सामन्तबा।*
14. *ऋग्वेद, 10.18.80।*
15. *तैत्तिरीय संहिता, 6.5.8.2.1.।*
16. *वही, 22.2.6 अयज्ञियो वा एष योडपत्नीकः।*
17. *ऋग्वेद, 1.109.2 अश्रवं हि भूरिदात्तरा वां विजमातुस्त वा वा स्यालत्।*
18. *वही ,10.85.9।*
19. *ऋग्वेद 1.109.2.।*
20. *तैत्तिरीय संहिता 6.6.4.3।*
21. *अथर्ववेद 3.35.3।*
22. *ऋग्वेद 10.18.7।*
23. *वही 10.95.1.2.18।*